7
सातवाँ भाग

आईए
नहजुल बलाग़ा
से सीखते हैं

(अल्लाह की बन्दगी)

हुज्जतुल इस्लाम
जवाद मोहद्दिसी

7

आइए

नहजुल बलाग़ा

से सीखते हैं

(अल्लाह की बन्दगी)

हुज्जतुल इस्लाम

जवाद मोहद्दिसी

ट्रांस्लेशन

अब्बास असग़र शबरेज़

किताब : अल्लाह की बन्दगी

राइटर : हुज्जतुल इस्लाम जवाद मोहद्दिसी

ट्रांस्लेटर : अब्बास असग़र शबरेज़

पहला प्रिन्ट : जूलाई 2017

तादाद : 2000

पब्लिशर : ताहा फ़ाउंडेशन, लखनऊ

प्रेस : न्यु लाइन प्रॉसेस, दिल्ली

क़ीमत : 25 रुपए

कांटेक्ट न० : +91- 9956 62 0017
8127 79 3428

Contents

अपनी बात

आज की दुनिया भीड़-भाड़, हुल्लड़-हंगामे और चकाचौंध की दुनिया है जिसमें इन्सान और इन्सानियत के ख़िलाफ़ हर वक़्त शैतानी चालें और शैतानी साज़िशें खेली जा रही हैं जिसकी वजह से हम जैसे इन्सान तरह-तरह की साइकॉलोजिकल व रूहानी बीमारियों और मुश्किलों में घिरे हुए हैं बल्कि मुश्किलों के एक ऐसे दलदल में फंसे हुए हैं जिस से निकलने का रास्ता भी नज़र नहीं आता। इसकी सबसे बड़ी वजह यह है कि जिन दुनियावी बातों की वजह से हम इन मुश्किलों में फंसे हुए हैं, उन मुश्किलों से निकलने के लिए भी हम उन्हीं लोगों की तरफ़ देखते हैं जिन्होंने हमारे चारों तरफ़ इन मुश्किलों का जाल बुना है। नतीजा यह होता है कि हम मुश्किलों में और फंसते जाते हैं। जबकि ज़िन्दगी की मुश्किलों से बाहर निकलने और एक सही ज़िन्दगी बिताने के लिए ख़ुदा ने अपनी किताब क़ुरआन और मासूम इमामों की शक्ल में इल्म के ख़ज़ाने हमारे पास भेजे हैं। इमामों व अहलेबैत[अ०] की ज़िंदगी और उनका बताया रास्ता हमारे लिए सबसे अच्छा रास्ता था और उनमें भी हज़रत अली[अ०] ने जो कुछ कहा या लिखा उस को समेट कर लिखी गई किताब नेहजुल बलाग़ा सबसे अलग है जो हर ज़माने में हमें सही रास्ता दिखाने के लिए सबसे रौशन चिराग़ है।

नेहजुल बलाग़ा एक ऐसी किताब है जिसमें हज़रत अली[अ०] ने ज़िन्दगी के हर मसले और हर मुश्किल के बारे में बात की है और उस मुश्किल से निकलने के लिए हमें रास्ता दिखाया है।

जो किताब आपके हाथों में है इसमें कोशिश की गई है कि दुनिया भर में मशहूर किताब 'नेहजुल बलाग़ा' में लिखी बातों को बिलकुल आसान ज़बान में अपने उन नौजवानों के सामने पेश किया जाए जो हज़रत अली[अ०] के कलाम को पढ़ना और समझना चाहते हैं ताकि हम अपने पालने वाले से ज़्यादा से ज़्यादा क़रीब हो सकें।

यह किताब आईए! नहजुल बलाग़ा से सीखते हैं (7) ईरान के एक मशहूर राइटर हुज्जतुल इस्लाम जवाद मोहद्दिसी ने लिखी है जो ''**अल्लाह की बन्दगी**'' के बारे में है। आपके सामने यह उसका हिन्दी ट्रांस्लेशन है।

इस सीरीज़ की

पहली कड़ी **तौबा**

दूसरी **दुआ**

तीसरी **शैतान**

चौथी **टाइम**

पाँचवी **दोस्ती**

छटी **इमाम अली[अ०] की वसिय्यत**

थी और यह सारी किताबें सब छप चुकी हैं।

अब यह इस सीरीज़ की सातवीं किताब है।

इस सीरीज़ के अभी और भी हिस्से हैं। अल्लाह ने तौफ़ीक़ दी तो वह भी जल्दी ही आपके सामने पेश किए जाएंगे।

किताब छपती है तो उसमें कहीं न कहीं कमियाँ या ग़लतियाँ रह ही जाती हैं। यह किताब आपके हाथों में है। इसे पढ़ने के बाद जो कमियाँ आपको दिखाई दें वह हमें ज़रूर बताईए ताकि अगले एडिशन में उन्हें दूर किया सके।

ताहा फ़ाउंडेशन

लखनऊ

खुदा की बन्दगी कामयाबी की चाबी

बिल्कुल उस कली की तरह जो सूरज की किरनें पाकर खिल उठती है और उसकी फूटती किरनों से मुस्कुराकर फूल बन जाती है, इन्सान के नेचर का फूल भी जब ख़ुदा की मोहब्बत के सूरज के सामने आता है और उसकी इबादतों में लग जाता है तो फूल बन कर महकने लगता है, गंदगियाँ और बुराईयाँ उस से दूर हो जाती हैं और वह अल्लाह वाला बनकर रूहानी दुनिया की ऊँचाईयों पर पहुंच जाता है।

ज़िन्दगी के बाग़ में इन्सान का फूल खिलाने के लिए कुछ क़ानूनों की ज़रूरत पड़ती है और इन्हीं क़ानूनों का नाम इबादत व नमाज़ है। किसी भी तरह के डर की जगह ख़ुदा के डर को जगह देना और किसी भी तरह की तारीफ़ या किसी की भी इबादत या किसी के भी आगे सर झुका देने की जगह ख़ुदा की तारीफ़ करना और उसके सामने अपना सर झुका देना यानी उसकी बन्दगी करना ही एक इन्सान के लिए सबसे बेहतरीन चीज़ है।

यह बन्दगी इन्सान को हर तरह की क़ैद से आज़ाद होना सिखाती है क्योंकि जो ख़ुदा का बन्दा बन जाता है वह किसी और की ग़ुलामी नहीं कर सकता। जो नमाज़ व इबादत या दुआएं माँगकर अपने पालने वाले से लौ लगाता है, वह सिर्फ़ अपने पैदा करने वाले पर

भरोसा करता है और जो इस दुनिया के बनाने वाले के सामने अपना सर झुका देता है वह एक ऐसा इन्सान बन जाता है जो बस एक ख़ुदा को मानने वाला होता है। ऐसा इंसान एक ऐसी ज़िंदगी का मालिक बन जाता है जो कभी ख़त्म नहीं होने वाली क्योंकि जन्नत और क़यामत की अनगिनत नेमतें सिर्फ़ उन्हीं लोगों के लिए हैं जो दुनिया में ख़ुदा की बन्दगी के इम्तेहान में कामयाब और बन्दगी की कसौटी पर खरे उतरते हैं।

अपने पैदा करने वाले के सामने पूरी तरह से सर झुका देना सही नेचर और सही परवरिश की निशानी है। इसके उलट ख़ुदा की बन्दगी से दूरी और ख़ुद को हर तरह से आज़ाद समझना शैतान की उंगलियों पर नाचने जैसा है वही शैतान जो ख़ुद भी गुनाहगार है और हमेशा ख़ुदा के बन्दों को भी ख़ुदा की बन्दगी से बाहर निकालने की कोशिशें करता रहता है ताकि गुनाहगारों की तादाद बढ़ाता रहे।

ख़ुदा ने जितने भी दीनी हुक्म भेजे हैं वह सब असल में इस ज़िन्दगी की ''इम्तेहानी स्टेज'' है जो अल्लाह के रसूलों और नबियों के हाथों हम तक पहुंची है।

जो भी ख़ुदा की तरफ़ से वाजिब किए गए कामों को पूरा करेगा और हराम किए गए कामों से बचेगा वही ख़ुदा का सच्चा बन्दा कहलाएगा। ख़ुदा की बारगाह में ऊँचा स्टेटस पाने और क़ुबूल होने की कसौटी भी यही है। इसलिए इस कसौटी को कभी नहीं भूलना चाहिए।

हज़रत अली[अ०] कहते हैः

> वाजिब कामों को पूरा करने से बेहतर कोई इबादत नहीं है।[1]

---

[1] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/311

जो इंसान ख़ुदा के हुक्म पर चलने में लापरवाही दिखाता हो, जिसे इस बात की भी जानकारी न हो कि अम्र बिल मारूफ़ व नही अनिल मुन्कर (*अच्छाईयों की तरफ़ बुलाना और बुराईयों से रोकना*) क्या है, हमें किस चीज़ का हुक्म दिया गया है और किस चीज़ से मना किया गया है, तो ऐसा आदमी ख़ुदा की बन्दगी का दावा कैसे कर सकता है? क्या ख़ुदा के बन्दे से उसकी बन्दगी और इबादत से हटकर किसी और चीज़ की उम्मीद भी की जा सकती है? बिल्कुल नहीं! ख़ुश नसीब हैं वह लोग जो अपने इमाम हज़रत अली[अ०] की तरह ख़ुदा का बन्दा होने पर ख़ुश होते हैं और इसी बन्दगी को दुनिया और फिर मरने के बाद क़यामत में सबसे बड़ी कामयाबी मानते हैं।

फ़ारसी के मशहूर शायर बाबा ताहिर कहते हैंः

> ख़ुश नसीब हैं वह लोग जिनकी मदद करने वाला उनका ख़ुदा है। ख़ुश क़िस्मत हैं वह लोग जो दिन रात 'अल-हम्द' और 'क़ुल हुवल्लाहु अहद' पढ़ते रहते हैं।
>
> ख़ुश नसीब हैं वह लोग जो हमेशा नमाज़ पढ़ते हैं और उसके बदले में जन्नत ख़रीद लेते हैं।

नहजुल बलाग़ा में ख़ुदा की बन्दगी, वाजिब कामों को पूरा करने और नमाज़ जैसे इस्लामी कलचर को फैलाने पर बहुत ज़्यादा ध्यान दिया गया है। इस से हज़रत अली[अ०] की नज़र में नमाज़ की बुलन्दी का अन्दाज़ा भी हो जाता है।

इस दुनिया में ऐसा एक भी इंसान नहीं हो सकता जिसे अल्लाह तआला से मिलने की चाहत तो हो लेकिन वह इबादत, नमाज़ और दुआ से दूर रहे। इसका मतलब यह है कि अगर नमाज़ी और इबादत करने वाले कम हों तो यह इस बात का सुबूत है कि

हमारे अंदर ख़ुदा से मिलने की चाहत है ही नहीं क्योंकि अगर चाहत होती तो हम में से हर एक नमाज़ी होता। नमाज़ अल्लाह से मिलने का सबसे आसान रास्ता है। इसलिए जितना हो सके हमें इस इबादत पर ध्यान देना चाहिए और ख़ुद को इस इबादत के लिए तैयार करना चाहिए क्योंकि यही अल्लाह की सबसे बड़ी बन्दगी है।

‘‘ख़ुजू व ख़ुशू’’ के साथ इबादत

जब दिल में ख़ुदा की मोहब्बत पैदा हो जाती है, सारी उम्मीदें ख़ुदा से जुड़ जाती हैं और जब इंसान सिर्फ़ और सिर्फ़ ख़ुदा से डरता है तो उसकी इबादत में ‘‘ख़ुज़ू व ख़ुशू’’ की हालत पैदा हो जाती है।

‘‘ख़ुशू’’ का मतलब होता है ख़ुदा के सामने अपने आप को नीचा और छोटा समझना। ख़ुदा की बड़ाई व बुलन्दी और उसके रब होने को मानते हुए उसे इबादत के लायक़ समझना।

अगर इंसान इस तरह इबादत करे कि उसके दिल में ख़ुदा का ख़ुशू यानी ख़ुदा का डर हो तो ऐसी इबादत बड़ा इन्सान होने और अल्लाह से उसकी मोहब्बत की निशानी है।

रातों को जाग-जागकर अल्लाह की इबादत करना, अल्लाह के सामने गिड़गिड़ाकर रोना, पूरे ध्यान से क़ुरआन पढ़ना, दिल की आँखों से जन्नत-जहन्नम को देखना और ‘‘जहन्नम’’ से बचने की दुआएं मांगना अल्लाह का ख़ास बन्दा होने की निशानी है।

हज़रत अली[अ०] ख़ुज़ू व ख़ुशू को तक़वे की निशानी मानते हैंः

> उनमें से एक की निशानी यह है कि तुम्हारे पैर उसके दीन पर जमे हुए, नर्मी व ख़ुश

मिज़ाजी के साथ गहरी नज़र, ईमान में यक़ीन, समझदारी के साथ दानाई, अच्छे हालात में भी बैलेंस भरी ज़िन्दगी बिताना और इबादत में ख़ुशू देखोगे।[1]

हज़रत अली[अ०] नहजुल बलाग़ा के ख़ुतब-ए-मुत्तक़ीन में ख़ुदा से डरने वाले ऐसे बन्दों की तारीफ़ यूँ करते हैंः

रात होती है तो अपने पैरों पर खड़े होकर क़ुरआन की आयतें ठहर-ठहर कर पढ़ते हैं जिस से अपने दिलों में दुखों को फिर से ताज़ा करते हैं और अपनी बीमारी का इलाज ढूँढते हैं। जब कोई ऐसी आयत आती है जिसमें जन्नत की लालच दिलाई गई हो तो उसकी लालच में उधर झुक पड़ते हैं और उस लालच में उनके दिल बेचैनी के साथ उधर ही खिंचने लगते हैं और जन्नत की ख़ूबसूरती उनकी आँखों के सामने आ जाती है। जब किसी ऐसी आयत पर उनकी नज़र पड़ती है जिसमें जहन्नम से डराया गया हो तो उसकी तरफ़ अपने दिल के कानों को झुका देते हैं और यह एहसास करने लगते हैं कि जहन्नम के अंगारों की आवाज़ और वहाँ की चीख़-पुकार उनके कानों के अन्दर पहुँच रही है। वह रुकू में अपनी कमरें झुकाए और सजदे में अपना माथे, हथेलियाँ, घुटने और पैरों के किनारे (अंगूठे) ज़मीन पर बिछाए हुए होते हैं और अल्लाह से माफ़ी के लिए दुआएं मांगा करते हैं।[2]

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/191 (ख़ुतबा मुत्तक़ीन)
[2] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/191 (ख़ुतबा मुत्तक़ीन)

ऊपर बताए तरीक़े से अल्लाह की इबादत करना ख़ुदा से बातें करने जैसा है। ऐसी इबादत से रूह[1] की गन्दगी को बड़ी आसानी से दूर किया जा सकता है।

ख़ुदा की इबादत व बन्दगी इन्सानों को दूसरे बन्दों की ग़ुलामी से आज़ाद कर देती है और इतना ही नहीं बल्कि इबादत करने वाले को इज़्ज़त भी देती है। अगर कोई इंसान ख़ुदा के सामने अपना सर झुकाकर खड़ा हो जाता है, उसके सामने सवाल के लिए अपने हाथ बुलन्द कर देता है, ज़मीन पर सजदे में गिर जाता है और ''ख़ुशू'' के ज़रिए अपने घमंड व अकड़ को मिटा देता है तो ऐसा वह सिर्फ़ इसलिए करता है क्योंकि वह ख़ुदा को इबादत व बन्दगी के लिए सबसे बहतर समझता है।

इन्सान जब तक ख़ुदा का बन्दा नहीं बनेगा तब तक वह ''आज़ाद'' नहीं हो सकता। ख़ुदा के सामने जो जितनी बन्दगी दिखाएगा और जितना ख़ुशू व ख़ुज़ू अपनाएगा उतना ही वह ख़ुदा के पास होता जाएगा क्योंकि इन्सान को हर चीज़ में उसकी ज़रूरत है और उसे किसी की कोई ज़रूरत नहीं है।

हम पूरी तरह से कमज़ोर हैं और ख़ुदा की ताक़त कितनी है इसे कोई समझ भी नहीं सकता। हमारे और उसके बीच का रिश्ता हमारी बन्दगी और उसकी ख़ुदाई का रिश्ता है।

इबादत तीन तरह से की जा सकती हैः

1- जन्नत की लालच में अल्लाह की इबादत जो कारोबारी लोगों की इबादत है

2- जहन्नम के डर से ख़ुदा की इबादत जो ग़ुलामों की इबादत है

---

[1] आत्मा

3- ख़ुदा की नेमतों के शुक्र के लिए इबादत जो आज़ाद लोगों की इबादत है और यही सबसे अच्छी इबादत है।

हज़रत अली[अ०] इस बारे में फ़रमाते हैं:

> कुछ लोग अल्लाह की इबादत सवाब के लिए करते हैं जो सौदा करने वालों की इबादत है। कुछ लोग डर की वजह से उसकी इबादत करते हैं और यह ग़ुलामों की इबादत है। कुछ लोग उसका शुक्र करने के लिए उसकी इबादत करते हैं और यही आज़ाद लोगों की इबादत है।[1]

एक दूसरी जगह इमाम फ़रमाते हैं:

अगर ख़ुदा ने अज़ाब की बात न की होती तब भी उसका हुक्म मानना, उसकी इबादत करना और गुनाहों से दूर रहना ज़रूरी होता क्योंकि उसने हमें अनगिनत नेमतें दी हैं जिन पर शुक्र करना ख़ुदा के हर बन्दे की ज़िम्मेदारी है।

> अगर ख़ुदा ने गुनाहों के अज़ाब से न डराया होता, तब भी उसकी नेमतों पर शुक्र करने का रास्ता यही था कि गुनाह न किए जाएं।[2]

ख़ुदा की तारीफ़ करना और शुक्र करना इन्सानों के दिल में उसकी पहचान के पैदा होने की निशानी है। अगर ख़ुदा की इबादत उसे पहचान कर होगी तो ऐसी इबादत ख़ुशू व ख़ुज़ू के साथ, दिल की गहराई से और बन्दगी की चाहत के साथ होगी।

इस दुनिया में पाई जाने वाली हर चीज़ पूरी तरह से ख़ुदा की मोहताज है। यही वजह है कि इस दुनिया की हर चीज़ यहां तक कि फ़रिश्ते, जिन्न, इंसान,

---

[1] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/237

[2] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/290

पेड़-पौधे, बाग़-खेत, ज़मीन आसमान, मिट्टी, पत्थर वग़ैरा सब के सब अपने पैदा करने वाले के सामने सर झुकाए हुए हैं।

इस लम्बी-चौड़ी दुनिया में भला हम हैं ही क्या और हमारा मुक़ाम ही क्या है?

यही सब से बड़ा सवाल है और जिसका जवाब हमें ख़ुद तलाश करना है।

दिल की गहराईयों से इबादत

ख़ुदा हम से सिर्फ़ सच्ची नियत के साथ पाक अमल चाहता है। मक्कारी, दिखावे व धोखेबाज़ी से भरी इबादत व बन्दगी की अल्लाह के यहाँ कोई जगह नहीं है। हमारी कोई भी इबादत हो उसकी क़ीमत भी तभी तय होती है जब दिल से हो और उसमें दिखावा न हो।

अगर कोई दूसरों का ध्यान अपनी तरफ़ खींचने के लिए या सिर्फ़ इसलिए कि लोग उसे एक अच्छा आदमी और मोमिन इंसान समझें, ख़ुदा की इबादत करे तो यह ''रिया'' है यानी दूसरों को दिखाने के लिए इबादत करना। हदीसों में कहा गया है कि ''रिया'' ख़ुदा की इबादत में किसी दूसरे को ख़ुदा का शरीक बना देने जैसा है। ऐसी इबादत न तो इन्सानों को ख़ुदा के पास ले जाती है और न ही क़यामत में इसका कोई सवाब या बदला मिलेगा। बल्कि यह एक ऐसा गुनाह है जिसकी वजह से इंसान से सवाल-जवाब भी किया जाएगा।

इस बारे में नहजुल बलाग़ा में यूँ मिलता हैः

> कोई बन्दा चाहे जितना जतन कर डाले दुनिया से निकल कर अल्लाह की बारगाह में जाना उसे तब तक फ़ायदा नहीं पहुँचा सकता

> जब तक कि वह इन चीज़ों में से किसी एक चीज़ से तौबा किये बिना न मरे और वह एक चीज़ यह है कि इबादत में किसी को उसका शरीक ठहराया हो।[1]

दिखावे की इबादत ग़लत, बेकार और बेफ़ाएदा है जिसकी ख़ुदा के यहाँ कोई क़ीमत नहीं है। इसलिए क़यामत में इंसान को ऐसी किसी इबादत से कोई उम्मीद भी नहीं लगाना चाहिए।

कुछ लोग जब अकेले होते हैं तो एक अलग तरह से इबादत करते हैं और जब लोगों के बीच में होते हैं तो एक अलग तरह से। अगर कोई ऐसा है तो समझ लेना चाहिए वह इसी बुराई यानी दिखावे की इबादत का शिकार हो गया है और इस दिखावे भरी इबादत से उसे कोई फ़ायदा पहुँचने वाला नहीं है।

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> जिसका अंदर व बाहर और हाथ व ज़बान एक जैसे हों वह अमानतदार है और अल्लाह की इबादत में सच्ची नियत से काम लेता है।[2]

इबादत में सच्ची नियत उसी इंसान की इबादत में पैदा होती है जो यह समझता है कि ख़ुदा हर जगह है और अपने कामों के बदले की उम्मीद सिर्फ़ ख़ुदा से रखता है। जो इंसान जितनी ज़्यादा ख़ुदा की पहचान रखता है उसी हिसाब से उसकी इबादत व बन्दगी में सच्चाई पैदा होती जाती है। अगर अकेले में और सबके बीच इबादत में फ़र्क़ है तो यह इस बात का सुबूत है कि ऐसे इंसान की इबादत दिल से नहीं हो रही है। हज़रत अली[अ०] तो इस बात तक का ध्यान रखते थे कि अलग-अलग शहरों व मुल्कों से ज़कात लाने वालों को भी यह हुक्म देते थे कि वह अपने इस

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/151
[2] नहजुल बलाग़ा, लैटर/26

काम में ख़ुदा के लिए अपनी सच्ची नियत को हमेशा ध्यान में रखें और लोगों के सामने दिखावे भरी इबादतों से बचेंः

> ख़बरदार! ऐसा न हो कि दिखने वाले मामलों में तो अल्लाह का हुक्म मानें मगर छुपे हुए कामों में उसका हुक्म न मानें।[1]

अगर ख़ुदा की इबादत दिल को पाक करने और ख़ुदा से क़रीब होने का हथियार है तो फिर यह दिखावे की इबादतें व दिखावे के काम, दिल को अंधा बनाने और ख़ुदा से दूर होने की वजह बन जाते हैं जिसके बाद इन्सान इबादत के नाम पर गुनाह करता है और कुछ नहीं।

नहजुल बलाग़ा में इमाम अली[अ०] ने इबादत में सच्ची नियत पर बहुत ज़ोर दिया है। इबादत की पाकीज़गी ख़ुद इबादत से कहीं ज़्यादा मुश्किल काम है। ख़ुदा के सिवा किसी और के लिए इबादत करना इसलिए बेकार है क्योंकि ऐसी कोई भी इबादत अल्लाह के यहाँ क़ुबूल नहीं होती क्योंकि दिखावे का ज़हर इबादतों को बर्बाद कर देता है जिसकी वजह से क़यामत में ऐसी इबादतों का कोई सवाब नहीं मिलेगा।

---

[1] नहजुल बलाग़ा, लैटर/26

ख़ुशी–ख़ुशी इबादत करना

ख़ुदा के सामने अपनी बन्दगी का इज़हार करने को इबादत कहते हैं। यह इबादत जितनी दिल से की जाएगी उतना ही अपना असर दिखाएगी। जितनी इसका असर होगा उतना ही बन्दे और ख़ुदा का रिश्ता भी मज़बूत होता जाएगा। इसलिए इबादत के लिए बेहतरीन हालात और बेहतरीन वक़्त का चुनाव ज़रूरी है ताकि इन्सान दिल की गहराईयों और खुले दिमाग़ के साथ इबादत कर सके।

> अपने दिन–रात का सब से अच्छा वक़्त अल्लाह की इबादत के लिए रखा करो। यूँ तो वह सारे काम भी अल्लाह ही के लिए हैं जो सच्ची व साफ़ नियत से हों।[1]

इसलिए इबादत के लिए एक सिस्टमेटिक लाइफ़ स्टाइल बहुत ज़रूरी है क्योंकि दिल कभी तो इबादत के लिए तैयार होता है और कभी नहीं होता। ख़ुदा की इबादतें भी कभी वाजिब हैं तो कभी मुस्तहब[2]। अगर इन्सान के दिल में इबादत की तैयारी की हालत पाई जा रही है तो उसे चाहिए कि वह वाजिब कामों के

---

[1] नहजुल बलाग़ा, लैटर/53

[2] मुस्तहब काम वह होते हैं जिन्हें किया जाए तो सवाब है और अगर न किया जाए तो कोई गुनाह नहीं होता जैसे नमाज़े शब, दुआ, दुरूद वग़ैरा।

साथ साथ मुस्तहब काम व इबादतें भी करे लेकिन अगर दिल नहीं चाह रहा है तो उसे चाहिए कि सिर्फ़ वाजिब ही को पूरा करे और बस वरना बेकार की दिल लगी होगी और कुछ नहीं।

हज़रत अली ने इस बारे यह फ़रमाया हैः

> दिल कभी खिंचे चले आते हैं और कभी उचाट हो जाते हैं। इसलिए जब दिल तैयार हो तो उस वक़्त उसे मुस्तहब इबादत के लिए तैयार करो और जब उचाट हो रहा हो तो बस वाजिब इबादतें ही करो।[1]

इबादत व बन्दगी को ज़बरदस्ती अपने ऊपर नहीं लादना चाहिए क्योंकि फिर इबादत में इबादत वाली हालत नहीं बन पाती। ज़बरदस्ती की इबादत चाहे अपने लिए हो या दूसरों के लिए, इन्सान को ख़ुद इबादत से ही दूर कर देती है।

इमाम अली ने एक जगह पर इस असलियत की तरफ़ भी ध्यान दिलाया हैः

> जब मुस्तहब इबादतें वाजिब इबादतों में रूकावट बन रही हों तो उन्हें छोड़ दो।[2]

> अगर मुस्तहब इबादतें वाजिब इबादतों में रूकावट बन रही हों तो उन से अल्लाह के क़रीब नहीं हुआ जा सकता।[3]

मुस्तहब इबादतें करने की बात वहाँ होती है जहाँ मुस्तहब इबादतें वाजिब इबादतों से न टकरा रही हों और इन्सान को वाजिब इबादतों से दूर न कर रही हों। दिल की गहराई से बन्दगी और इबादत से मोहब्बत का मतलब यह है कि ऐसी इबादत इन्सान के

---

[1] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/312

[2] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/278

[3] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/39

अंदर सुधार लाए और फिर उसकी इबादत को बाक़ी रखने की गारंटी भी ले।

इसके यह मायनी बिल्कुल नहीं हैं कि अगर इबादत करने का दिल नहीं चाह रहा है तो सिरे से ख़ुदा की इबादत ही न की जाए और अपने पालने वाले से इबादत व बन्दगी का रिश्ता–नाता तोड़ लिया जाए बल्कि ऐसे वक़्त पर इन्सान को ऐसे हालात पैदा करने की कोशिश करना चाहिए कि उसका दिल इबादत की तरफ़ खिंचा चला जाए और उसके अंदर इबादत की मोहब्बत पैदा हो जाए।

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैं कि ऐसे हालात में अपने दिल को धोखा दिया करो यानी इन्सान को चाहिए कि अलग–अलग तरीक़ों से धीरे–धीरे इबादत के लिए मुनासिब हालात पैदा करने की कोशिश करे जैसे ख़ुद अपने आप से कहे कि पूरा क़ुरआन पढ़ना ही तो ज़रूरी नहीं है बल्कि रोज़ाना एक पेज भी तो पढ़ा जा सकता है या अगर मुस्तहब नमाज़ ही पढ़ना है तो दो रकअत से भी तो शुरू की जा सकती है ताकि दिल घबरा न जाए और कहीं ऐसा न हो कि परेशान होकर उस इबादत को भी छोड़ दे जिस पर उसका दिल राज़ी था। यह तरीक़ा अपनाया जाए तो धीरे–धीरे वाजिब इबादतों के साथ–साथ दिल में दूसरी इबादतों की मोहब्बत भी पैदा हो सकता है और दिन बीतने के साथ–साथ यह मोहब्बत बढ़ भी सकती है।

इस बारे में हज़रत अली[अ०] यह फ़रमा रहे हैंः

> अपने दिल को बहाने करके इबादत के रास्ते पर लगाओ और उसके साथ मेहरबानी भरा बर्ताव रखो। उस पर दबाव मत डालो। जब वह दूसरी किसी मुश्किल में फंसा हुआ न हो उस वक़्त उस से इबादत का काम लो मगर जो वाजिब इबादतें हैं उनकी बात दूसरी है

> उन्हें तो बहरहाल अदा करना ही है और हर हाल में वक़्त पर अदा करना है।[1]

जिस तरह एक्सर्साइज़ करने में इन्सान की फ़िज़िकल ताक़त से ज़्यादा उस पर बोझ व दबाव नहीं डाला जा सकता वरना वह एक्सर्साइज़ जिस्म को मज़बूत करने के बजाए बेकार बना देगी, उसी तरह यह ध्यान रखना भी बहुत ज़रूरी है कि दिल में इबादत के लिए चाहत भी हो। साथ ही साथ प्रेक्टिस ही के रास्ते इबादतों में दिलचस्पी को भी बढ़ाया जा सकता है ताकि धीरे-धीरे दिल इबादत के लिए तैयार हो जाए।

ख़ास बात यह है कि एक मुसलमान को चाहिए कि वह अपने ख़ुदा की इबादत व बन्दगी के लिए एक ख़ास तैयारी किया करे और इबादत के कल्चर को अपनी रोज़ाना की ज़िन्दगी में उतार ले। यह काम तभी हो सकता है जब समझदारी से काम लिया जाए। ख़ुदा से मोहब्बत और उसकी इबादत को ख़ुदा से जुड़ने, शैतानी चालों से बचने और बुराईयों से दूर होने का ज़रिया (साधन) भी समझा जाए। अगर इन्सान और अल्लाह के बीच का यह रिश्ता कमज़ोर पड़ गया और इबादतों में कमी आ गई तो फिर शैतान इन्सान की ज़िन्दगी में पूरी तरह रच-बस जाएगा।

हज़रत अली[अ०] रोज़ाना की इबादतों के लिए इस तरह फ़रमाते हैंः

> मोमिन का दिन तीन हिस्सों में बंटा होता है। एक वह हिस्सा जिसमें वह अपने पालने वाले की इबादत करता है। दूसरा वह जिसमें वह अपनी रोज़ी-रोटी कमाता है और तीसरा वह

---

[1] नहजुल बलाग़ा, लैटर/69

जिसमें वह हलाल व पाक नेमतों के लिए अपने दिल को आज़ाद छोड़ देता है।[1]

अपनी इबादतों के लिए एक ख़ास वक़्त तय करने से जहां इन्सान की दीनी ज़िम्मेदारियाँ पूरी होती हैं वहीं इसका एक फ़ाएदा यह भी है कि इस से उसकी ज़िन्दगी भी मज़ेदार बन जाती है। इसलिए रोज़ाना के कामों के साथ-साथ इन्सान को चाहिए कि अपनी इबादत के लिए भी एक सही और अच्छे वक़्त को चुने।

पैग़म्बरे अकरम[स०] की ज़िंदगी में देखने को मिलता है कि उन्होंने अपनी घरेलू ज़िन्दगी को तीन हिस्सों में बांट रखा था जिसमें से एक हिस्सा ख़ुदा की इबादत के लिए ख़ास था।[2]

अगर कोई बन्दा यह तरीक़ा और ज़िन्दगी के इस क़ानून को अपना ले तो यह एक तरह से अपने दिल में ख़ुदा को भी बसाने की एक खुली निशानी है। ख़ुदा के भेजे नबियों, मासूम इमामों और दूसरे नेक बन्दों की ज़िन्दगी में ख़ुदा की इबादत व बन्दगी, मुनाजात[3], नमाज़ और घर के किसी कोने में पाक दिल के साथ ख़ुदा से बातें करने के लिए एक ख़ास वक़्त हुआ करता था।

---

[1] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/390

[2] मकारिमुल अख़्लाक़/13

[3] अल्लाह से दुआएं माँगना और बातें करना

इबादतों के लिए एक मुसीबत

जब किसी चीज़ पर कोई मुसीबत आती है तो वह मुसीबत उस चीज़ को बेकार तो कर ही देती है, साथ ही उसे इस काम का भी नहीं छोड़ती कि इस्तेमाल कर लिया जाए बल्कि कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि उसका इस्तेमाल बहुत घाटे वाला हो जाता है।

ख़ुद पसन्दी यानी अपने आप से मोहब्बत करने, अपने आप को पसंद करने और फिर अकड़ने या घमंड करने को कहते हैं। इस्लाम में इसे एक ख़तरनाक बुराई माना गया है। यह इबादतों के लिए इतनी बड़ी मुसीबत है कि इबादतों को बिल्कुल बेकार बना देती है। ख़ुद पसन्दी की वजह से इन्सान ख़ुदा की इबादत भी नहीं कर पाता क्योंकि इबादत करने वाला अपने आप को इबादत और अल्लाह की बन्दगी के सबसे ऊंचे मुक़ाम पर समझने लगता है। यह सोच उसको लोगों से बहुत दूर कर देती है क्योंकि ख़ुद को पसन्द करने वाला इन्सान दूसरों को गिरी हुई नज़र से देखता है। इस से भी बुरी बात यह है कि अगर ऐसा आदमी इबादतें करता भी है तो उसकी इबादत का उसे कोई सवाब नहीं मिलता और उसे अपनी इबादतों से किसी तरह का कोई फ़ाएदा नहीं हो पाता क्योंकि वह अपने घमंड की वजह से अपने आप को दूसरों से अच्छा समझने लगता है या फिर अपनी इबादत पर पूरी तरह से ध्यान नहीं दे पाता। उसकी यही बुराई

उसकी इबादतों को बर्बाद कर देता है और उसकी नेकियों को मिटा देता है।

शैतान को ख़ुदा के यहाँ से निकाले जाने वाली बात बहुत मशहूर है जो क़ुरआन में भी है। शैतान को उसकी ख़ुद पसंदी की वजह से ही निकाला गया था क्योंकि वह अपनी बहुत इबादतों पर अकड़ता था। अपने इसी घमंड की वजह से उसने ख़ुदा के हुक्म के बाद भी आदम[अ०] को सजदा नहीं किया था। उसका कहना था कि मैं आदम से बड़ा हूँ, फिर मैं आदम को क्यों सजदा करूँ ?

इमाम अली[अ०] इस बारे में फ़रमाते हैंः

> अल्लाह ने शैतान के साथ जो कुछ किया तुम्हें उस से सीख लेना चाहिए क्योंकि उसकी लम्बी लम्बी इबादतों और भरपूर कोशिशों पर उसके एक घड़ी के घमंड ने पानी फेर दिया था। जबकि उसने छः हज़ार साल तक इबादत की थी और यह भी नहीं पता कि वह दुनिया के साल थे या क़यामत के। अब भला शैतान के बाद कौन रह जाता है जो उस जैसा गुनाह करके अल्लाह के अज़ाब से बच जाए।[1]

कभी-कभी इंसान अपनी ज़रा सी इबादत या किसी अच्छे काम को ही बहुत कुछ समझ बैठता है और फिर उस पर अकड़ता भी है। इस तरह के एहसास और सोच का नतीजा यह होता है कि फिर हमारी तरफ़ से ख़ुदा की इबादतों और अच्छे कामों में कमी होने लगती है।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> ख़ुद पसन्दी आगे बढ़ने में रूकावट बनती है।[2]

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/190
[2] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/167

जबकि उलमा और अच्छे बन्दे अपनी पूरी उम्र इबादतों में बिताने के बाद भी अपनी इबादतों को कुछ नहीं समझते और उनकी ज़बानें बराबर ख़ुदा की बन्दगी व इबादत में कमी के लिए इस्तेग़फ़ार[1] करती रहती हैं। फिर हम जैसे आम लोग अपनी कुछ रकअतों, कुछ नमाज़ों या कुछ अच्छे कामों पर क्यों अकड़ें ?

---

[1] अपने गुनाहों पर अल्लाह से माफ़ी मांगना

ख़ुदा के अच्छे बन्दों की पहचान

हज़रत अली[अ०] इबादत करने वाले सब लोगों के सरदार हैं। उनकी इबादतें और उनकी ज़िंदगी दीन के रास्ते पर चलने वालों और ख़ुदा की इबादत करने वालों के लिए एक नमूना है।

आइए! देखते हैं कि ख़ुदा के अच्छे बन्दों की पहचान और ख़ुदा की मोहब्बत में डूबे इन्सानों के हालात इमाम अली[अ०] किस तरह बता रहे हैं।

सच यह है कि हज़रत अली[अ०] अपने चाहने वालों के बारे में शिकायत करते नज़र आते हैं कि उनके दिल के अंदर ख़ुदा की मोहब्बत की तड़प बहुत कम पाई जाती है। इसीलिए इमाम, रसूले इस्लाम[स०] के साथियों की मिसाल देते हुए बताते हैं कि उनके अंदर ख़ुदा की मोहब्बत कूट–कूट कर भरी हुई थी और इमाम यह मिसालें इस लिए दे रहे हैं ताकि इमाम के चाहने वालों के अंदर भी इस मोहब्बत की कम से कम एक झलक ही पैदा हो जाए।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैं:

> मैंने अल्लाह के रसूल[स०] के ख़ास–ख़ास सहाबी देखे हैं। मुझे तो तुम में से एक भी ऐसा नहीं दिखाई पड़ता जो उनके जैसा हो। वह इस हालत में सोकर उठते थे कि उनके बाल बिखरे हुए और चेहरे मिट्टी से अटे हुए होते

> थे। जबकि रात वह सजदों व नमाज़ों में काट चुके होते थे और वह भी इस तरह कि कभी अपने सर सजदे में रखते थे तो कभी अपने गाल। क़यामत की याद से इस तरह बेचैन रहते थे जैसे अंगारों पर ठहरे हुए हों और लम्बे-लम्बे सजदों की वजह से उनकी आँखों के बीच (माथे पर) बकरी के घुटनों ऐसे गट्टे पड़े होते थे। जब भी उनके सामने अल्लाह का नाम आ जाता था तो उनकी आँखें बरस पड़ती थीं। यहाँ तक कि उनके गिरेबानों को भी भिगो देती थीं। वह इस तरह काँपते रहते थे जिस तरह तेज़ झक्कड़ वाले दिन पेड़ थरथराते हैं, सज़ा के डर और सवाब की उम्मीद में।[1]

एक जगह पर इमाम अपने उन वफ़ादार साथियों की बात भी करते हैं जो पिछली जंगों में शहीद हो गए थे। इमाम उनके हालात यूँ बयान करते हैंः

> रोने से उनकी आँखें सफ़ेद, रोज़ों से उनके पेट चिपके हुए, दुआओं से उनके होंट सूखे हुए और जागने से उनके रंग पीले पड़ गये थे।[2]

एक बन्दे के अंदर ख़ुदा की मोहब्बत जितनी ज़्यादा गहरी होगी उतनी ही उसे अपनी इबादत व बन्दगी छोटी नज़र आएगी। यही वजह है कि फ़रिश्ते भी इबादतों के मामले में अपने आप को कुछ नहीं समझते। इसी तरह ख़ुदा के पाक बन्दे भी अपनी सारी इबादतों के बावजूद भी अपनी कमियाँ गिनते दिखाई पड़ते हैं। तभी तो यह सब अपनी ज़बान से

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/95
[2] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/119

इस्तेग़फ़ार[1] करते नज़र आते हैं। इन लोगों की नज़र में ख़ुदा की बड़ाई व बुज़ुर्गी के सामने अपनी इबादतें व बन्दगी कुछ भी नहीं होती।

जैसा कि हज़रत अली[अ०] ने हमें बताया है कि अल्लाह के फ़रिश्ते हर वक़्त इबादत में लगे रहते हैं, कुछ हर पल रुकू में हैं तो कुछ सजदे में। फिर भी यह सब अपनी इबादतों से थकते नहीं हैं और न ही कभी घमंड करते हैं। फ़रिश्ते अपनी लम्बी-लम्बी और ढेर सारी इबादतों को कुछ भी नहीं समझतेः

> ... न उन में कभी अकड़ पैदा होती है कि वह अपने पिछले कामों पर ध्यान देने लगें।[2]

सब जानते और मानते हैं कि ख़ुद इमाम अली[अ०] इबादत करने वाले सब लोगों में सबसे ऊपर हैं और सबके लिए आइडियल हैं लेकिन वह भी अपनी इबादतों को ख़ुदा के सामने बहुत कम समझते हैं।

इमाम अली[अ०] रास्ते के लम्बा होने और मरने के बाद के इस सफ़र में सामान की कमी के बारे में अफ़सोस भरी ठंडी सांस भरते हुए फ़रमाते हैंः

> अफ़सोस! रास्ते के लिए सामान कम और रास्ता लम्बा है।[3]

हज़रत अली[अ०] की इबादतों का तो यह हाल था कि ख़ुद हमारे दूसरे इमामों ने कहा है कि कौन है जो उनकी तरह ख़ुदा की इबादत करने वाला हो?!

अगर हम इस रास्ते पर चलना चाहते हैं तो इसका सबसे आसान सा रास्ता यह है कि अपने मासूम इमामों[अ०] की ज़िन्दगियों को पढ़ें और उनसे इबादतों का तरीक़ा सीखें।

---

[1] अपने गुनाहों पर अल्लाह से माफ़ी मांगना
[2] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/89
[3] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/77

नमाज़ः सबसे बड़ी इबादत

किसी बड़ी हस्ती के सामने अपना सर झुका देना इन्सान के नेचर में है।

इन्सान का अपने पालने वाले के सामने दुआ मांगना, रोना, गिड़गिड़ाना और इबादत करना भी एक नेचुरल चीज़ है। इसी दुआ व इबादत के साए में उसे एक तरह का दिली और दिमाग़ी सुकून भी मिलता है।

नमाज़ ख़ुदा के सामने सर को झुका देने की सब से बड़ी निशानी है।

अगर इंसान ख़ुदा के सामने सर झुकाना चाहता है, सजदा करना चाहता है, ख़ुदा की तारीफ़ करना चाहता है और उसकी नेमतों का शुक्र अदा करना चाहता है तो ख़ुदा की बारगाह में नमाज़ अदा करना इसका सबसे बेहतरीन रास्ता है। वह पालने वाला जो इस दुनिया के झंझटों व झमेलों में इन्सान की सब से बड़ी ढारस व उम्मीद है, जंग के मैदान में इस्लाम के नाम पर लड़ने वालों की उम्मीद है, मुश्किलों व मुसीबतों के तेज़ झोंके में टूटे दिलों की ढारस है और ज़िन्दगी के अकेलेपन में इन्सानों के लिए सबसे बड़ा साथी भी है, ऐसे पालने वाले की बारगाह में अपना सर झुका देना हर समझ रखने वाले इंसान की ज़िम्मेदारी है जिसका सब से अच्छा रास्ता नमाज़ है।

सब्र और नमाज़ के ज़रिये मदद माँगो।[1]

अगर कोई इंसान नमाज़ ही से दूर हो जाए तो वह ख़तरों व मुश्किलों में भला कैसे इस मुश्किल भरे रास्ते पर मज़बूती के साथ जमा रह सकता है।

नमाज़ की अहमियत हज़रत अली[अ०] की हदीसों में बिल्कुल निखर कर सामने आती दिखाई पड़ती है। इमाम ने नमाज़ के बारे में इस तरह फ़रमाया हैः

(1) नमाज़ दीन का सुतून है

इमाम अली[अ०] ने अपनी ज़िन्दगी के आख़िरी दिनों में अपने बिस्तर पर अपने बेटों और दूसरों को जिन बातों की नसीहत की थी उनमें से एक नमाज़ भी थी। इस वसिय्यत में इमाम ने फ़रमाया थाः

> नमाज़ के बारे में अल्लाह से डरना क्योंकि वह तुम्हारे दीन का सुतून (Pillar) है।[2]

क्या यह बात सच नहीं है कि कोई भी बिल्डिंग बिना खम्बों के टिकी नहीं रह सकती? क्या यह बात सही नहीं है कि बिना पिलर के घर बनाया ही नहीं जा सकता?

अगर दीन और दीन के हर हुक्म को देखा जाए तो नमाज़ सुतून यानी पिलर जैसी ही दिखाई देती है जिसके ऊपर सारा इस्लामी सिस्टम ठहरा हुआ है।

(2) नमाज़ सारी इबादतों की जान है

बहुत सी हदीसों में नमाज़ के बारे में कहा गया है कि अगर नमाज़ क़ुबूल हो गई तो सारी इबादतें क़ुबूल हो जाएंगी और अगर नमाज़ ठुकरा दी गई तो फिर

---

1 सूरए बक़रा/45
2 नहजुल बलाग़ा, लैटर/47

सारी इबादतें भी ठुकरा दी जाएंगी। हज़रत अली[अ०] ने यह बात इस तरह से कही हैः

> याद रखो! तुम्हारा हर काम नमाज़ के पीछे–पीछे है।[1]

(3) नमाज़ इस्लाम का झंडा है

हर दीन, हर धर्म और हर स्कूल ऑफ़ थाट का कोई न कोई झंडा होता है। नमाज़ इस्लाम का झंडा है। यह सच्चाई बहुत सी हदीसों में अलग–अलग तरह से बताई गई है और नहजुल बलाग़ा में इस तरह से आई हैः

> नमाज़ की पाबन्दी करो क्योंकि यही दीन है।[2]

(4) नमाज़ ख़ुदा से जुड़ने की चाबी है

नहजुल बलाग़ा के एक ख़ुतबे में हज़रत अली ने इस्लाम की बुनियादों की बात की है और वहां पर तौहीद, ईमान, जिहाद के साथ–साथ नमाज़ को भी गिनवाया है। इमाम ने इन सब के बीच नमाज़ को सब से आगे रखा है और कहा है कि नमाज़ इन्सान को ख़ुदा से सबसे ज़्यादा क़रीब करने वाली इबादत हैः

> अल्लाह की तरफ़ जाने वाले रास्ते ढूँढने वालों के लिए सब से अच्छा रास्ता अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाना है... और नमाज़ की पाबन्दी क्योंकि दीन यही है।[3]

---

[1] नहजुल बलाग़ा, लैटर/27
[2] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/108
[3] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/18

नमाज़ को दीन का सुतून यानी पिलर बताया गया है, यह ख़ुद इस इबादत के सब से ख़ास होने का एक बहुत बड़ा सुबूत है।

नमाज़ का मतलब हज़रत इब्राहीम[अ०] और हज़रत मोहम्मद[स०] की आवाज़ पर लब्बैक कहना है।

नमाज़ पूरी दुनिया में दी जाने वाली अज़ान के साथ मिल-जुल कर अपने पालने वाले के दरवाज़े पर हाज़िर होने की निशानी है।

नमाज़ तौहीद, मुस्लिम एकता और आपसी मेल-जोल की बेहतरीन हालत है।

नमाज़ को सही से समझकर और पहचान कर पढ़ना बहुत ज़रूरी है। हमारे ऊपर नमाज़ का हक़ इतना ज़्यादा है कि सुस्ती व काहिली को दूर भगाए बिना इस हक़ को पूरा किया ही नहीं जा सकता और न ही नमाज़ के सबसे बड़ी इबादत होने का ध्यान रखे बिना पूरी तरह से यह इबादत की जा सकती है।

हज़रत अली[अ०] इस बारे में फ़रमाते हैंः

> नमाज़ का हक़ तो बस वही ख़ुदा के बन्दे पहचानते हैं जिन्हें दुनिया की सज-धज और माल व औलाद की ख़ुशी बहकाती नहीं है। जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है कि कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्हें ख़ुदा के ज़िक्र, नमाज़ पढ़ने और ज़कात देने से न उनका कारोबार बहका पाता है और न लेन-देन।[1]

नमाज़, अल्लाह के अच्छे बन्दों की तरफ़ से अपने पालने वाले की बारगाह में शुक्र करने का नाम है, वह बन्दे जो अपने दिल की गहराईयों से उसकी मोहब्बत में जकड़े होते हैं।

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/197

नमाज़ की जान

इबादत व नमाज़ का एक जिस्म है और एक जान। अगर जिस्म का फलना-फूलना और बाक़ी रहना रूह यानी जान की वजह से है तो नमाज़ का असरदार होना और इसके ज़रिए अल्लाह से क़रीब होना भी नमाज़ की रूह[1] की ही वजह से है।

नमाज़ की रूह यानी दिल की गहराईयों से ख़ुदा की बारगाह में हाज़िर होना, सच्चे दिल से बन्दगी का एहसास करना, अपने पालने वाले की बारगाह में अपनी बेचारगी का एहसास करना, और इन सब बातों के साथ-साथ ज़ाहिरी और भीतरी पाकीज़गी का ध्यान रखना... अगर यह सब नहीं है तो फिर ऐसी नमाज़ बेजान, बेअसर और खोखली है।

जिस तरह कुछ रोज़ेदारों को रोज़ा रखने से भूख-प्यास के सिवा कुछ भी नहीं मिलता उसी तरह कुछ नमाज़ियों को भी नमाज़ से रातों को जागने और बदन की थकावट के सिवा कुछ नहीं मिलता क्योंकि जो बातें ऊपर कही गई हैं उनके बिना वह नमाज़ से मिलने वाले दर्जों व बुलन्दियों तक पहुँच ही नहीं पाते जिसकी वजह से नतीजा यह होता है वह ख़ुदा से

---

[1] जान

क़रीब भी नहीं हो पाते और न ही इस तरह की नमाज़ इंसान को बुराईयों से रोक पाती है।

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> रातों को इबादत करने वाले ऐसे बहुत से लोग हैं जिन्हें रात भर जागने और परेशानी उठाने के सिवा कुछ नहीं मिलता।[1]

जो इबादत यक़ीन के साथ की जाए और जो नमाज़ अल्लाह को पहचान कर पढ़ी जाए बस वही नमाज़ इंसान को पाक बनाती है और उस पर अपना असर छोड़ती है।

हज़रत अली[अ०] ऐसे यक़ीन वाले इन्सानों की नींद को शक में डूबे नमाज़ियों की नमाज़ से कही अच्छा मानते हैंः

> यक़ीन की हालत में सोना शक की हालत में नमाज़ पढ़ने से अच्छा है।[2]

यह इस बात की निशानी है कि नमाज़ी के दिल में अगर शक के बजाए यक़ीन हो तो उसका यह यक़ीन उसकी इबादत को बहुत ऊँचाई तक ले जाता है। अगर नमाज़ी, नमाज़ की ज़ाहिरी शर्तों जैसे लिबास के पाक होने, वुज़ू के सही होने, हम्द व सूरों को ठीक से पढ़ने के साथ-साथ नमाज़ की रूह और इबादत की गहराई की तरफ़ ध्यान नहीं देगा तो ऐसी नमाज़ का कोई फ़ाएदा नहीं है क्योंकि ऐसी हालत में उसने अपनी नमाज़ से कुछ भी नहीं लिया होगा।

नमाज़ की रूह का मतलब है ख़ुदा की याद, उसका ज़िक्र, उसकी नेमतों को याद करना और अपनी ज़रूरतों को सिर्फ़ उसी से कहना।

क़ुरआन में हैः

---

[1] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/145

[2] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/97

मेरी याद के लिए नमाज़ बरपा करो।[1]

गुनाहों और बुराईयों से बचना ही ख़ुदा को याद रखने की सबसे बड़ी निशानी है और अगर ख़ुदा का नाम या उसकी तस्बीह तो ज़बान पर रहे लेकिन नमाज़ पढ़ने वाले का दिल ख़ुदा के बजाए कहीं और लगा हो तो ऐसी नमाज़ का क्या फ़ायदा?

नहजुल बलाग़ा में हैः

> बेशक! अल्लाह ने अपनी याद को दिलों की सैक़ल बनाया है।[2]

यानी अल्लाह को याद करने से मुर्दा दिल ज़िन्दा हो जाते हैं और वह इस रह से खिल उठते हैं जैसे मुरझाए हुए फूल खिल जाते हैं। इसीलिए इमाम अली[अ०] ने 'सैक़ल' कहा है क्योंकि जब तलवारों पर ज़ंग लग जाता है तो उन्हें सैक़ल किया जाता है यानी उन पर धार लगाई जाती है और वह फिर से जंग के लिए तैयार हो जाती हैं।

नमाज़ भी ख़ुदा का ज़िक्र है। इसलिए ज़रूरी है कि यह इन्सान के दिल को ज़िन्दा करने वाली हो क्योंकि नमाज़ और दिल में पाया जाने वाला अंधेरा दोनों एक जगह इकट्ठा नहीं हो सकते।

नमाज़ यानी ख़ुदा की तरफ़ मुड़ना। अगर इन्सान क़िब्ले की तरफ़ मुहं किए खड़ा हो लेकिन उसका दिल ख़ुदा के बजाए कहीं और लगा हो तो फिर ऐसी नमाज़ बेजान होगी और कुछ भी नहीं है।

एक हदीस में नमाज़ व ज़कात दोनों को ख़ुदा से जुड़ने की चाबी बताया गया है जिनमें से नमाज़ का रिश्ता सीधे ख़ुदा से है और ज़कात का रिश्ता बन्दों की ज़रूरतों से है जो एक माली ज़िम्मेदारी है जिसे पूरा करना भी वाजिब है।

---

[1] सूरए ताहा/14
[2] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/219

इमाम फ़रमाते हैंः

> मुसलमानों के लिए नमाज़ के साथ ज़कात को भी ख़ुदा से जुड़ने की चाबी बनाया गया है।[1]

अगर नमाज़ें हमें ख़ुदा से क़रीब न कर सकें और नमाज़ की वजह से हमारी ज़िन्दगी इस्लामी न बन सके तो यह इस बात की निशानी है कि हम नमाज़ की गहराई और असलियत तक नहीं पहुंच सके हैं। नमाज़ एक ऐसी सच्चाई का नाम है जो इन्सान का रिश्ता ख़ुदा से जोड़ती है, ख़ुदा की पहचान को बढ़ाती है, इन्सान के दिल को पाक करती है और ज़िन्दगी को इस्लामी बनाती है, दुनिया की लालच व घमंड को कुचलती है, शैतान को इन्सानों के आसपास चक्कर लगाने और उनके दिलों में शक डालने के उसके ख़्वाब को चकनाचूर कर देती है। असल में बुराईयों से दूर होने का राज़ ही यही है जिसकी बात क़ुरआन और हदीस में भी आई है। अगर हमारी नमाज़ इस से हटकर कुछ और है तो फिर हम ने ख़ुदा तक जाने का सही रास्ता कहीं खो दिया है चाहे ज़ाहिर में हम क़िब्ले की तरफ़ ही क्यों न मुंह किए खड़े हों और अल्लाह–अल्लाह कर रहे हों।

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/197

नमाज़ः आसमानों की सैर है

नमाज़ की वजह से हमें रोज़ाना पाँच बार अपने पालने वाले के सामने हाज़िर होने का मौक़ा मिलता है जहाँ जिस्म व जान की गंदगियाँ दूर होती हैं और इन्सान का दिल पाक हो जाता है। यह नमाज़, नमाज़ पढ़ने वाले के अंदर ख़ुदा की बारगाह में पूरी तरह से सर झुका देने की हालत भी पैदा करती है।

हज़रत अली[अ०] ने गुनाहों की ज़ंजीरों में जकड़े जाने से बचने का रास्ता नमाज़ को ही बताया है।ः

> बेशक! नमाज़ गुनाहों को झाड़कर इस तरह अलग कर देती है जैसे पेड़ से पत्ते झड़ते हैं और उन्हें इस तरह अलग कर देती है जैसे जानवरों की गर्दनों से फंदे खोलकर उन्हें आज़ाद कर दिया जाता है।[1]

हज़रत अली[अ०] बात को आगे बढ़ाते हुए नमाज़ के बारे में रसूल[स०] की एक बड़ी अच्छी मिसाल देते हुए फ़रमाते हैं कि रसूल[स०] ने दिल को पाक करने के लिए कहा है कि नमाज़ एक नहर की तरह है और इस नहर से अपने दिल को पाक कर लो।

> रसूल[स०] ने नमाज़ को उस नहर जैसा बताया है जो किसी के घर के दरवाज़े पर बह रही हो और वह उसमें दिन-रात पाँच बार ग़ुस्ल

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/197

> करता हो, तो क्या उम्मीद की जा सकती है कि उसके जिस्म पर कोई मैल रह जाएगा।[1]

इस हदीस में नमाज़ को एक बहती नहर कहा गया है जिसका पानी सब के सामने से बह रहा है जिसमें वह पाँचों वक़्त डुबकी लगाता है। ज़ाहिर है कि अब अगर कोई पूरे साल या पूरी ज़िंदगी रोज़ाना पांच बार इस इस्लामी नहर में डुबकी लगाएगा तो उसके अंदर गुनाहों और बुराईयों जैसी बीमारियाँ कहाँ बचेंगी?

अल्लाह सफ़ाई–सुथराई रखने वाले लोगों को पसंद करता है। नमाज़ भी पाक रहने का एक बेहतरीन रास्ता है इसलिए हम जितनी नमाज़ें पढ़ेंगे उतना ही ज़्यादा पाक होते जाएंगे और फिर ख़ुदा से क़रीब भी होते जाएंगे। इसी वजह से अल्लाह के रसूल[स०] ने नमाज़ की पाबन्दी करने, ज़्यादा से ज़्यादा नमाज़ पढ़ने और इसके ज़रिए ख़ुदा तक पहुंचने की नसीहत की हैः

> पाबन्दी से नमाज़ पढ़ो... ज़्यादा से ज़्यादा नमाज़ें पढ़कर ख़ुदा के क़रीब हो जाओ।[2]

घमंड व अकड़ बहुत बड़ी बुराईयाँ हैं। नमाज़ इन बुराईयों से बचने का सबसे आसान रास्ता है। नमाज़ इन्सान के दिल से घमंड को खुरच देती है।

इस बारे में हज़रत अली[अ०] ने यह बात कही हैः

> घमंड को दूर करने के लिए ही नमाज़ को वाजिब किया गया है।[3]

अगर कोई अपने दिल को पाक करना चाहता है तो वह इस साफ़ पानी की नहर यानी नमाज़ को अंदेखा नहीं कर सकता ताकि अपने दिल पर पड़ी धूल को साफ़ कर सके।

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/197
[2] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/197
[3] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/252

घमन्ड से दूरी

जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि नमाज़ के फ़ाएदों में से एक फ़ाएदा घमंड व घमंड वाली सोच का ख़त्म होना भी है। यह वह बुराई है जो इन्सान को जहन्नमी बना देती है। इसी बुराई की वजह से शैतान को हमेशा–हमेशा के लिए मलऊन कहकर ख़ुदा की बारगाह से निकाला गया था। इसी बुराई के नतीजे में शैतान को क़यामत में जहन्नम के भड़कते शोलों का ईंधन बनाया जाएगा।

हज़रत अली[अ०] ने अपने एक ख़त में इसी बात की तरफ़ इशारा किया है और ऐसे बेनमाज़ी जहन्नमियों के बारे में क़ुरआन की एक आयत की तरफ़ इशारा करते हुए फ़रमाते हैंः

> क्या क़ुरआन में जहन्नमियों के जवाब को तुम ने नहीं सुना कि जब उन से पूछा जाएगा कि कौन सी चीज़ तुम्हें जहन्नम में खींच लाई है तो वह कहेंगे कि हम नमाज़ी नहीं थे।[1]

जी हाँ! नमाज़ का सबसे बड़ा काम इन्सान के घमंड को तोड़कर उसे ख़ुदा की बारगाह में बन्दगी के पूरे एहसास के साथ लाना है।

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/197

हज़रत अली[अ०] अपने एक मशहूर ख़ुतबे ''ख़ुतब–ए–क़ासेआ'' में ख़ुदा की कुछ इबादतों जैसे नमाज़, रोज़ा और हज वग़ैरा की तरफ़ इशारा करते हुए फ़रमाते हैं इन सारी इबादतों का काम घमंड व घमंड जैसी बीमारियों का इलाज करना है। इमाम अली[अ०] घमंड के भयानक नुक़सान बताते हुए इसे शैतान का एक बहुत बड़ा जाल बताते हैं जिसके ज़रिए वह अल्लाह के बन्दों के दिलों में घुस जाता है और इन्सानों को हमेशा–हमेशा के लिए कामयाबी के रास्ते से दूर कर देता है।

हज़रत अली[अ०] की नज़र में घमंड या घमंड एक ऐसी भयानक बीमारी है जो उलमा तक को ख़ुद उनके इल्म के ज़रिए घमंडी, बेकार व मजबूर कर देती है।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> ख़ुदा अपने मोमिन बन्दों को नमाज़, ज़कात और पहले से तय दिनों में रोज़ों के जिहाद के ज़रिये बचाता है। इस तरह उनके हाथ–पैरों को कंट्रोल करता है। उनकी आँखों को बन्दगी के एहसास से झुकाकर उनके दिलों को सही रास्ते पर लगाए रहता है जिससे उनका घमंड दूर हो जाता है।[1]

ताज्जुब होता है धोखा खाए हुए दिलों और उनकी हालतों पर और ताज्जुब होता है दिलों के मज़बूत क़िलों में शैतान के घुस जाने पर जिसे उसने अपना अड्डा बना रखा है। अगर दिलों को संभालकर नहीं रखा जाएगा तो यह शैतान के हाथों उड़ा लिए जाएंगे। अगर इन्सान अपने दिल में ख़ुदा को मेहमान नहीं बनाएगा तो फिर शैतान उसमें अपना घर बना लेगा। अगर इन्सान अपने दिल को बचाकर नहीं रखेगा तो शैतानों की फ़ौज उस पर क़ब्ज़ा कर लेगी।

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/190

नमाज़ की तैयारी

इन्सान किस चीज़ को कितना बड़ा मानता है इसका अन्दाज़ा इस बात से लगाया जाता है कि वह अपनी ज़िन्दगी में उस चीज़ को कितनी जगह देता है।

अब सवाल यह है कि हज़रत अली[अ०] की नज़र में नमाज़ की जगह क्या है? इस सवाल का सही जवाब इबादत व नमाज़ के बारे में हज़रत अली[अ०] की नसीहतों और उनकी वसिय्यत से लगाया जा सकता है।

इमाम[अ०] ने इबादत व नमाज़ पर बहुत ज़ोर दिया है ताकि लोगों के दिलों में इसका दर्जा कम न होने पाए।

उधर क़ुरआने करीम ने नमाज़ के क़ाएम करने पर ज़ोर दिया है। नमाज़ क़ाएम करना और नमाज़ पढ़ना, इन दोनों बातों में फ़र्क़ है। नमाज़ क़ाएम करना यानी नमाज़ को सिर्फ़ पढ़ो ही नहीं बल्कि इसे बरपा भी करो। यह चीज़ मुसलमानों की समाजी और निजी दोनों ज़िन्दगियों से जुड़ी हुई है यानी ख़ुद भी पढ़ो और दूसरों के लिए भी नमाज़ का इंतेज़ाम करो। हज़रत अली[अ०] ने भी अपने एक ख़ुतबे में यही बात कही है।

इमाम अपने शहीद साथियों को याद करते हुए ठंडी साँस लेकर फ़रमाते हैं:

> हाये! मेरे वह भाई जिन्होंने क़ुरआन को पढ़ा तो उसे मज़बूत किया और अपनी ज़िम्मेदारियों पर ग़ौर किया तो उन्हें पूरा किया।[1]

इमाम अली[अ०] ने मिस्र में अपने गवर्नर मोहम्मद बिन अबी बक्र को एक ख़त भेजा तो उसमें भी उन्हें अव्वले वक़्त नमाज़ पढ़ने की नसीहत की थीः

> नमाज़ को उसके तय वक़्त पर पढ़ना। अगर तुम्हारे पास वक़्त ज़्यादा हो तो वक़्त से पहले न पढ़ लेना और अगर कामों में लगे हुए हो तो उसे पीछे मत डाल देना। याद रखो! कि तुम्हारा हर काम नमाज़ के पीछे–पीछे है।[2]

नमाज़े जुमा में बराबर जाना भी इस इबादत को बड़ा समझने की निशानी है।

हज़रत अली[अ०] अपने एक सहाबी हारिस हमदानी से फ़रमाते हैंः

> जुमे के दिन नमाज़े जुमा पढ़े बिना सफ़र शुरू न करना। हाँ! अगर ख़ुदा की राह में जिहाद के लिए जाना हो या कोई और मजबूरी आ जाए तो दूसरी बात है।[3]

इमाम के इस हुक्म से नमाज़े जुमा पढ़ने की अहमियत का अन्दाज़ा अच्छी तरह से हो जाता है।

नमाज़े जुमा में कमज़ोरों, बूढ़े मर्दों और औरतों की हालत का ध्यान रखना भी वाजिब है ताकि वह भी इमामे जमाअत के साथ–साथ नमाज़ पढ़ सकें। ख़ुद रसूले इस्लाम[स०] ने भी हज़रत अली[अ०] से यही बात

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/180
[2] नहजुल बलाग़ा, लैटर/27
[3] नहजुल बलाग़ा, लैटर/69

कही थी और हज़रत अली[अ०] ने भी अपने गवर्नरों को इस बात का ध्यान दिलाया था।

एक बार इमाम अली[अ०] ने अपने कुछ गवर्नरों को एक ख़त लिखा जिसमें ज़ोहर व अस्र, मग़रिब व इशा और नमाज़े सुबह के सही वक़्त की पहचान कराते हुए उन से कहा थाः

> नमाज़ इतनी छोटी पढ़ाओ कि तुम्हारे पीछे नमाज़ पढ़ने वालों में जो सबसे कमज़ोर आदमी हो उस पर किसी तरह का बोझ न पड़े और लोगों के लिए तुम्हारी नमाज़ मुसीबत न बन जाए।[1]

इमाम अली[अ०] ने जब अपने एक साथी मालिके अश्तर को मिस्र का गवर्नर बनाकर भेजा था तो उन्हें हुकूमत करने के कुछ फ़ार्मूले भी लिखकर दिए थे जो नहजुल बलाग़ा में आज भी मौजूद हैं और सारी दुनिया में मशहूर हैं। इन फ़ार्मूलों में नमाज़ के बारे में इमाम ने मालिके अश्तर से यह बात कही थीः

> देखो! जब लोगों को नमाज़ पढ़ाना तो ऐसी नमाज़ न पढ़ाना कि नमाज़ को लम्बा करके उन्हें नमाज़ से ही दूर कर दो और न इतनी छोटी पढ़ाना कि नमाज़ ही बर्बाद हो जाए क्योंकि नमाज़ियों में बीमार भी होते हैं और ऐसे भी जिन्हें कोई काम होता है। जब मुझे अल्लाह के रसूल[स०] ने यमन की तरफ़ भेजा था तो मैंने उन से पूछा था कि नमाज़ किस तरह पढ़ाऊँ? तो फ़रमाया था कि ऐसी नमाज़ पढ़ाना जैसी उनमें के सबसे ज़्यादा कमज़ोर नमाज़ी की नमाज़ हो सकती है। और तुम्हें मोमिनों के हाल पर मेहरबान होना चाहिए।[2]

---

[1] नहजुल बलाग़ा, लैटर/52
[2] नहजुल बलाग़ा, लैटर/53

यह वह तरीक़ा है जिस से समाज में नमाज़ की अहमियत भी बाक़ी रहेगी और मोमिनों के दिलों में नमाज़े जमाअत में आने का शौक़ भी पैदा होगा। नमाज़ को बड़ा समझना और अव्वले वक़्त पढ़ने से नमाज़ियों के अंदर इस इबादत के लिए दिलचस्पी भी बढ़ती है।

अगर हदीसों में नमाज़ इस्लाम के झंडे जैसी है तो यह झंडा जितना ऊँचा होगा और जितना लहराएगा उतनी ही मुसलमानों और क़ुरआन के मानने वालों के बीच दीन की शान भी निखर कर सामने आएगी।

नमाज़
अल्लाह वालों की ज़िन्दगी में

तौहीद को मानने वाले यानी अल्लाह को एक मानने वाले और दिल की गहराईयों से उस पर यक़ीन रखने वाले ख़ुदा के ख़ास बन्दे इबादत व नमाज़ से भी दिली मोहब्बव करते हैं। इन लोगों का इबादत व नमाज़ से कभी भी दिल नहीं भरता।

इन अल्लाह वालों में सब से ऊपर हमारे आख़िरी रसूल हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[स०] का नाम आता है। रसूले इस्लाम[स०] इबादत व नमाज़ को अपनी ज़िंदगी में सब से ऊपर रखते थे। इस बारे में नहजुल बलाग़ा में हज़रत अली[अ०] ने यूँ फ़रमाया हैः

> रसूल[स०] को जन्नत की ख़ुशख़बरी पहले ही दी जा चुकी थी। इसके बाद भी वह इतनी नमाज़ें पढ़ते थे अपने आप को सख़्तियों में डाल लेते थे। अल्लाह ने उनसे फ़रमाया था कि अपने घर वालों को नमाज़ का हुक्म दीजिए और ख़ुद भी उसकी पाबन्दी कीजिए। इसलिए रसूल अपने घर वालों को नमाज़ का ख़ास हुक्म देते थे और ख़ुद भी बहुत नमाज़ें पढ़ते थे।[1]

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/197

हज़रत अली[अ०] हमें यहां पैग़म्बरे अकरम[स०] की थका देने वाली इबादतों के बारे में बता रहे हैं। लेकिन रसूले इस्लाम पूरे ध्यान और दिल की गहराईयों के साथ थकन का एहसास किये बिना नमाज़ें पढ़ा करते थे और कभी भी परेशान नहीं दिखते थे।

ख़ुद हज़रत अली[अ०] कैसी-कैसी इबादतें करते थे और नमाज़ें पढ़ते थे, रात के अंधेरे में अपने ख़ुदा से मोहब्बत भरे लहजे में कैसी-कैसी दुआएं माँगते थे।

ज़िरार बिन ज़मरा इमाम अली[अ०] के एक सच्चे सहाबी थे। वह इमाम की इबादतों के बारे में कहते हैं:

> मैं गवाही देता हूँ कि मैंने कई बार देखा है कि रात में हर तरफ़ अंधेरा फैल चुका होता था और इमाम अली[अ०] अपने मुसल्ले पर खड़े अपनी दाढ़ी अपने हाथों में पकड़े हुए साँप का डंक खाए हुए की तरह तड़प रहे होते थे और किसी बड़े दुखी इन्सान की तरह रो रहे होते थे। ऐ दुनिया! ऐ दुनिया! दूर हो जा मुझ से! मेरे सामने आकर क्यों खड़ी हो जाती है? क्यों मुझे अपनी तरफ़ खींच रही है? वह वक़्त न आए कि तू मुझे धोखा दे सके! भला यह कैसे हो सकता है? जा किसी और को धोखा दे! मुझे तेरी कोई चाहत नहीं है। मैं तो तीन बार तुझे तलाक़ दे चुका हूँ कि जिसके बाद मैं तेरी तरफ़ पलट कर आ ही नहीं सकता। तेरी ज़िन्दगी थोड़ी, तू बहुत गिरी हुई और तेरी चाहत बुरी है।
>
> अफ़सोस! रास्ते का सामान कम, रास्ता लम्बा, सफ़र लम्बा और मंज़िल कठिन है।[1]

---

[1] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/77

रसूल[स०] के बाद हज़रत अली[अ०] ने ही सब से पहले नमाज़ पढ़ी थी। इस बारे में भी इमाम ने फ़रमाया हैः

> ऐ अल्लाह! मैं पहला आदमी हूँ जो तेरी तरफ़ आया है और तेरे हुक्म को सुनकर उसे पूरा किया है। तेरे रसूल[स०] के सिवा किसी ने भी मुझ से पहले नमाज़ नहीं पढ़ी है।[1]

हज़रत अली[अ०] ने एक दूसरे ख़ुतबे में क़ुरआन की आयतें सुनाते हुए कुछ लोगों की तारीफ़ें की हैं जिन्हें कारोबार का लेन-देन और रोज़ी-रोटी न तो ख़ुदा की याद से रोक पाती थी और न नमाज़ पढ़ने से।

> कुछ लोग ऐसे भी हैं कि जिन्हें ख़ुदा की याद, नमाज़ पढ़ने और ज़कात देने से न कारोबार रोक पाता है और न लेन-देन।[2]

हज़रत अली ने मोमिनों की इबादत और नमाज़े शब की बात भी की है। ऐसे ख़ुदा से मोहब्बत करने वाले लोगों की ज़िन्दगी में नमाज़ की जगह बहुत ऊँची होती है और इन लोगों के लिए नमाज़ क़यामत में जन्नत के अंदर जाने की चाबी होती है।

हज़रत अली[अ०] अपने एक ख़ुतबे में फ़रमाते हैंः

> वह गुनाह मुझे दुखी नहीं करता जिसके बाद मुझे इतनी छूट मिल जाए कि मैं दो रकअत नमाज़ पढ़कर अपने बचने की दुआ कर लूँ।[3]

ख़ुदा की बन्दगी करके नमाज़ी को बड़ा दिली सुकून मिलता है। यहाँ आकर उसकी सारे दुख ख़त्म हो जाते हैं। जब इन्सान को अंदर से सुकून मिल जाता है तो वह बाहर से भी ख़ुश दिखाई पड़ता है।

---

[1] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/129
[2] नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/197
[3] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/299

आख़िरी बात

यहाँ तक तो हम ने नहजुल बलाग़ा की सैर करके इमाम अली[अ०] की ज़िंदगी में इबादत और नमाज़ का तरीक़ा सीख लिया लेकिन इमाम की कही बातों पर चलना और इस किताब में लिखी बातों को अपनी ज़िन्दगी में ढालना अब हमारा अगला काम होना चाहिए।

ख़ुदा की याद हमारे दिलों को ज़िन्दा रखती है। जो लोग इबादतों की इस दुनिया में आना चाहते हैं उन्हें चाहिए कि पहले अपने और ख़ुदा के बीच की दूरियों को ख़त्म करें और फिर दुआ व इबादत के सहारे एक तजुर्बा करके देखें। रात के सन्नाटे में नमाज़े शब पढ़कर और ख़ुदा से बातें करके अल्लाह से अपनी दूरियों को कम करें और इन पलों में अपने दुखी दिल के फूल को फिर से खिलाने की कोशिश करें।

जब बन्दगी व इबादत, नमाज़ व दुआ, तिलावत और नमाज़े शब के ज़रिए ख़ुदा से क़रीब हुआ जा सकता है तो फिर अल्लाह से यह दूरी क्यों है?

अगर कोई थका-हारा और दुखी इन्सान सुकून चाहता है या कोई मोहब्बत का प्यासा ख़ुदा के करम का मोहताज है तो उसे चाहिए कि वह अपने पालने वाले की आवाज़ को ध्यान से सुने, अपने ख़ुदा को पुकारे, उसके सामने सजदे में सर झुका दे और उसकी बन्दगी के मज़े उठाए।

सच तो यह है कि ख़ुदा हम से दूर है ही नहीं। ईरानी शायर *शेख़ सादी* ने क्या पते की बात कही हैः

> मेरा महबूब तो मेरे बहुत पास है। ताज्जुब तो इस बात पर है कि मैं उस से दूर हूँ।

*****